आर्थिक आयोजन के उद्देश्य
(OBJECTIVES OF ECONOMIC PLANNING)

पिछले साढ़े पांच दशकों में आर्थिक आयोजन को जिन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अपनाया गया है उनका उल्लेख विविध पंचवर्षीय योजनाओं में किया गया है। **भारत में विभिन्न विकास योजनाओं के अंतर्गत मुख्य रूप से छः उद्देश्यों का उल्लेख मिलता है : (1) आर्थिक संवृद्धि, (2) आत्मनिर्भरता, (3) पूर्ण रोजगार, (4) आर्थिक असमानताओं में कमी, (5) गरीबी निवारण और (6) आधुनिकीकरण।** इन उद्देश्यों का उल्लेख दूसरी और तीसरी पंचवर्षीय योजनाओं में विस्तार के साथ किया गया है। बाद की पंचवर्षीय योजनाओं में भी इनका जिक्र है। लेकिन सभी योजनाएं इन उद्देश्यों को समान महत्त्व नहीं देतीं। जहां शुरू की योजनाओं में महज आर्थिक संवृद्धि और विकास पर बल दिया गया, वहां पांचवीं पंचवर्षीय योजना में विकास के साथ-साथ आत्मनिर्भरता और गरीबी निवारण को विशेष महत्त्व दिया गया। छठी योजना में रोजगार का उल्लेख एक काफी महत्त्वपूर्ण उद्देश्य के रूप में किया गया था। सातवीं योजना में आधुनिकीकरण पर जोर था। **1990 के दशक में उदारीकरण की प्रक्रिया शुरू होने से अब आर्थिक आयोजन का एकमात्र उद्देश्य संवृद्धि ही बचा है। अन्य उद्देश्यों को अब कोई गंभीरता के साथ नहीं लिया जाता।** उनका पंचवर्षीय योजनाओं में उल्लेख औपचारिकता मात्र है।

आर्थिक संवृद्धि
(Economic Growth)

भारत की सभी पंचवर्षीय योजनाओं का मुख्य उद्देश्य संवृद्धि रहा है। जिन पंचवर्षीय योजनाओं में किन्हीं अन्य उद्देश्यों का उल्लेख अधिक जोरदार ढंग से किया गया है उनका भी असली उद्देश्य आर्थिक संवृद्धि ही था। इसकी पुष्टि कई तरह से होती है। प्रथम तो भारतीय पंचवर्षीय योजनाएं जब विभिन्न उद्देश्यों का उल्लेख करती हैं तो वे उनके बीच किसी तरह के विरोध पर ध्यान नहीं देतीं। **बस यह मान लिया जाता है कि आर्थिक संवृद्धि के साथ-साथ गरीबी दूर होगी, आर्थिक असमानताएं कम होंगी और रोजगार का विस्तार होगा।** वास्तव में ऐसा होना जरूरी नहीं है। अक्सर आर्थिक संवृद्धि का लाभ अपेक्षाकृत सम्पन्न वर्ग को होता है और देश में आर्थिक असमानताएं बढ़ती हैं। भारत में भी यही हुआ है। दूसरे, पंचवर्षीय योजनाओं के स्वरूप तथा उनके अन्तर्गत निर्धारित लक्ष्यों और साधनों के विभिन्न क्षेत्रों के बीच आबंटन से भी प्रायः यह साफ हो जाता है कि भारत में आर्थिक आयोजन का मुख्य उद्देश्य आर्थिक संवृद्धि ही है। इसके अलावा जब योजना की सफलता-असफलता पर विचार किया जाता है तो मुख्य रूप से इस बात की जांच की जाती है कि आर्थिक संवृद्धि की दर क्या रही है। भारत में आर्थिक संवृद्धि को आर्थिक आयोजन का प्रधान उद्देश्य बनाना ठीक ही है। जिस देश की अर्थव्यवस्था में लगभग दो सौ वर्षों तक औपनिवेशक शोषण के कारण कोई खास विकास न हुआ हो और वहां की अर्थव्यवस्था संसार में विकास की दृष्टि से बहुत पीछे रह गई हो वहां आर्थिक संवृद्धि पर जोर देना बहुत जरूरी है।

प्रारम्भिक चरणः 1951 से 1980 तक (The earlier phase : 1951 to 1980)–भारत में आर्थिक आयोजन की शुरुआत 1951 में हुई। पहली पंचवर्षीय योजना, जिसकी अवधि 1951 से 1956 तक थी, राष्ट्रीय आय में वृद्धि का लक्ष्य 2.1 प्रतिशत

SHOT ON REDMI Y3
AI DUAL CAMERA

प्रति वर्ष था। दरअसल यह लक्ष्य इतना नीचा था कि इसे प्राप्त कर प्रति व्यक्ति आय में किसी तरह की वृद्धि कर पाना संभव नहीं था। इस योजना की अवधि में राष्ट्रीय आय में लगभग 4.4 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि हुई। दूसरी पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय आय में 4.5 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य निर्धारित किया गया था। प्रथम योजनावधि में हुई आर्थिक संवृद्धि की तुलना में यह उद्देश्य बहुत ऊंचा नहीं था लेकिन संवृद्धि के लिए निर्धारित युक्ति के पहलू से दूसरी पंचवर्षीय योजना पहली पंचवर्षीय योजना से भिन्न थी। पहली योजना में उद्देश्य मुख्य रूप से दूसरे विश्वयुद्ध के कारण अस्त-व्यस्त अर्थव्यवस्था को भावी विकास के लिए मजबूत आधार प्रदान करना था। इस दृष्टि से उसमें कृषि उत्पादन को बढ़ाने और आधारभूत ढांचे के विकास पर जोर दिया गया था। दूसरी पंचवर्षीय योजना से दरअसल आयोजित आर्थिक संवृद्धि की दिशा में काम शुरू हुआ। इस योजना में मुख्य रूप से बुनियादी या भारी उद्योगों के विकास पर जोर दिया गया। दूसरी पंचवर्षीय योजना प्रोफेसर पी. सी. महलानोबिस द्वारा प्रतिपादित विकास युक्ति (development strategy) पर निर्भर थी, इसलिए जब इस योजना में विकास के लिए भारी उद्योगों की स्थापना जरूरी समझी गई तो सार्वजनिक क्षेत्र का तेजी के साथ विस्तार हुआ। भारत में शुरू से ही भारी उद्योगों और परिवहन एवं ऊर्जा के विकास के बीच सन्तुलन रखना आवश्यक समझा गया। दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान संवृद्धि दर आशानुकूल नहीं रही। योजना की संपूर्ण अवधि में राष्ट्रीय आय में 4.0 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि हुई।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय आय में 5.6 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य निर्धारित किया गया था। यह लक्ष्य भी दूसरी योजना के अन्तर्गत निर्धारित लक्ष्य से ज्यादा ऊँचा नहीं था। लेकिन तीसरी पंचवर्षीय योजना में निवेश का जो स्वरूप तय किया गया था उसके आधार पर योजना आयोग का विश्वास था कि आगे की पंचवर्षीय योजनाओं में संवृद्धि की इस दर को बनाए रख पाना सम्भव होगा। तृतीय योजना के विकास कार्यक्रमों में कृषि को प्राथमिकता क्रम में ऊँचा स्थान प्रदान किया गया था। पहली दो योजनाओं और विशेष रूप से द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अनुभव के आधार पर योजना आयोग को यह स्पष्ट हो गया था कि भारतीय अर्थव्यवस्था में संवृद्धि की दर निर्धारित करने वाले तत्त्वों में एक महत्त्वपूर्ण तत्व कृषि उत्पादन है। इस योजना में दूसरी पंचवर्षीय योजना की तरह ही इस्पात, ईंधन एवं ऊर्जा, मशीनी औजार, भारी इंजीनियरिंग तथा रसायन उद्योगों को आर्थिक विकास की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण माना गया। इस तरह तीसरी पंचवर्षीय योजना में भी विकास-युक्ति बुनियादी रूप से वही थी जो दूसरी पंचवर्षीय योजना में थी। बस दोनों में एक मामूली अन्तर था। तीसरी पंचवर्षीय योजना में कृषि और औद्योगिक विकास के बीच सन्तुलन पर अधिक जोर दिया गया था। तीसरी योजना की सम्पूर्ण अवधि में राष्ट्रीय आय में केवल 2.6 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि हुई। इस अवधि में चूंकि जनसंख्या वृद्धि की दर 2.2 प्रतिशत थी, इसलिए प्रति व्यक्ति आय में केवल 0.6 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि हुई। तीसरी योजना संवृद्धि की दृष्टि से पूरी तरह असफल रही और नतीजा यह हुआ कि अर्थव्यवस्था गम्भीर संकट में फंस गई। स्थिति यहां तक बिगड़ी कि दीर्घकालिक आर्थिक आयोजन को तीन वर्ष के लिए स्थगित कर दिया गया। इस तरह चौथी पंचवर्षीय योजना 1966 के बजाय 1969 में शुरू हुई।

चौथी पंचवर्षीय योजना तैयार करते समय योजना आयोग ने 18 वर्षों तक भारत में किए गए आर्थिक आयोजन के प्रयोग से प्राप्त अनुभव के आधार पर यह निष्कर्ष अपने सामने रखा था कि देश में आर्थिक विकास की तब तक जो गति रही थी वह सभी व्यक्तियों को रोजगार दे सकने, सामाजिक सेवाओं के आधार को विस्तृत करने और आम लोगों के जीवन स्तर में पर्याप्त सुधार करने के लिए काफी नहीं थी। खाद्यान्नों की पूर्ति में अनिश्चितता और विदेशी सहायता पर निर्भरता अलग से आर्थिक संवृद्धि के लिए गंभीर समस्याएं बनी हुई थीं। योजना आयोग के अनुसार, इन समस्याओं पर काबू पाए बिना आर्थिक संवृद्धि की प्रक्रिया को तेज कर पाना तो दूर रहा, आयोजन काल के शुरू के दो दशकों में हासिल की गई संवृद्धि-दर को बनाए रख पाना भी कठिन था। चौथी योजना में संवृद्धि की गति को तेज करने के इरादे से स्थिरता (stability) पर जोर दिया गया। इसी दृष्टिकोण को अपनाकर चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत राष्ट्रीय आय में वृद्धि की वार्षिक दर 5.7 प्रतिशत निर्धारित की गई थी। व्यवहार में संवृद्धि की दर को ऊंचा उठा पाना सम्भव नहीं हुआ और शुरू की योजनाओं की तरह ही 1969 से 1974 के बीच राष्ट्रीय आय में वृद्धि केवल 3.1 प्रतिशत प्रति वर्ष हुई। जहां तक अस्थिरता का प्रश्न है, इस दृष्टि से स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ। इस काल में बिजली और परिवहन सम्बन्धी कठिनाइयां भी बढ़ गईं। नतीजा यह हुआ कि कृषि और उद्योग दोनों ही क्षेत्रों में विकास कार्य धीमा पड़ गया।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारूप (ड्राफ्ट) में मुख्य उद्देश्यों के रूप में गरीबी दूर करने और आत्मनिर्भरता प्राप्त करने का उल्लेख था। आर्थिक संवृद्धि का इस योजना में जिक्र किया गया था लेकिन इसे गरीबी निवारण और आत्मनिर्भरता का पूरक उद्देश्य बताया गया था। इस योजना मे सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP) में 5.5 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य था और यह पहली चार

योजनाओं के अन्तर्गत हासिल की गई संवृद्धि दर से कहीं ऊंचा था। पांचवी योजना का अन्तिम रूप प्रारूप से कई तरह से भिन्न था लेकिन सबसे खास बात यह थी कि जब इस योजना को अन्तिम रूप दिया गया तो गरीबी निवारण और आत्मनिर्भरता पर ज्यादा जोर नहीं दिया गया और इस तरह व्यवहार में फिर से आर्थिक संवृद्धि आयोजन का प्रधान उद्देश्य बन गया। लेकिन संवृद्धि का लक्ष्य सकल राष्ट्रीय उत्पाद में 5.5 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि से घटा कर 4.4 प्रतिशत वार्षिक कर दिया गया। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए योजना आय में नियमित रूप से वृद्धि नहीं हुई। राष्ट्रीय आय की दर में घटत-बढ़त मुख्य रूप से कृषि उत्पादन में उतार-चढ़ाव के कारण थी। फिर भी पांचवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि में (1974-79 की अवधि में) सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP) में 4.9 प्रतिशत वृद्धि हुई जो पिछली पंचवर्षीय योजना में संवृद्धि दर को देखते हुए संतोषजनक लगती है। लेकिन बात ऐसी नहीं है। यह संवृद्धि दर अल्पकालिक सिद्ध हुई क्योंकि 1979-80 में अर्थव्यवस्था को भारी धक्का लगा और सकल राष्ट्रीय उत्पाद में 6.0 प्रतिशत कमी हुई।

जब हम आयोजन काल के पहले तीन दशकों में संवृद्धि की प्रवृत्ति दर (trend rate) पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि वह अधिक से अधिक साधारण कही जा सकती है। इन तीस वर्षों में सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि की वार्षिक वृद्धि दर 3.5 प्रतिशत थी।

बाद का चरण : 1981 से 2009 तक (The later phase : 1981 to 2009)– बाद के चरण में पांच पंचवर्षीय योजनाएं पूरी हो गई हैं। **इस अवधि में आर्थिक संवृद्धि की औसत दर 5.7 प्रतिशत प्रति वर्ष के लगभग रही है जो पहले तीन दशकों की औसत संवृद्धि दर 3.5 प्रतिश में बेहतर है।**

छठी पंचवर्षीय योजना में सकल घरेलू उत्पाद में 5.2 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य निर्धारित किया गया। इस संवृद्धि लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अर्थव्यवस्था के कुछ खास पहलुओं पर विशेष जोर दिया गया। ये बातें थीं : (1) पूंजी स्टॉक के इस्तेमाल में कुशलता के स्तर को सुधारना; (2) निवेश दर को ऊंचा करना; (3) निवेश को सही क्षेत्रों में करना; और (4) भुगतान सन्तुलन में बढ़ते हुए घाटे को नियंत्रण में रखना जिससे ऐसा विदेशी विनिमय संकट पैदा न हो कि आर्थिक संवृद्धि प्रक्रिया में एकदम रुकावट पैदा हो जाए। छठी पंचवर्षीय योजना में संवृद्धि की वास्तविक दर 5.4 प्रतिशत वार्षिक रही। इसके प्राप्त होने में कृषि क्षेत्र में संतोषजनक उत्पादन वृद्धि और सेवा क्षेत्र में तेजी के साथ प्रगति से विशेष सहायता प्राप्त हुई। इस योजना की अवधि में कृषि उत्पादन में 4.3 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि हुई जो निर्धारित लक्ष्य 3.8 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि से ऊंची थी। औद्योगिक और खनिज उत्पादन में केवल 3.7 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि हुई जबकि लक्ष्य 6.9 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि था। दरअसल यह छठी योजना की प्रगति में सबसे कमजोर पक्ष था। निवेश के स्तर को प्रायः संवृद्धि का एक महत्त्वपूर्ण निर्धारक माना जाता है और इस दृष्टि से छठी योजना अपने लक्ष्य को पाने में सफल रही। लेकिन बचत के स्तर में आशा के अनुकूल वृद्धि नहीं हुई। इसका मुख्य कारण यह था कि सार्वजनिक क्षेत्र आशा के अनुकूल मुनाफा कमाने में असफल रहा। सातवीं पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य सकल घरेलू उत्पाद में 5 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि प्राप्त करना था। योजना आयोग के अनुसार यह दर छठी योजना में प्राप्त होने वाली संवृद्धि दर के अनुरूप थी। सातवीं योजना की अवधि में सकल घरेलू उत्पाद में 5.5 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि हुई। तात्पर्य यह है कि संवृद्धि दर लक्ष्य से कहीं ऊपर रही। अपने आप में यह संवृद्धि दर काफी उत्साहवर्धक लगती है। लेकिन यदि हम इस बात पर ध्यान दें कि यह संवृद्धि दर सतत् रूप से प्राप्त नहीं हुई अपितु योजना के दौरान संवृद्धि दर में तेज उतार-चढ़ाव होते रहे तो स्थिति कम उत्साहवर्द्धक लगती है।

1980 के दशक में संवृद्धि दर ऊंची होने के बावजूद इस अवधि में आर्थिक संवृद्धि-प्रक्रिया की व्यापक स्तर पर आलोचना हुई है। इस संवृद्धि प्रक्रिया की एक मुख्य आलोचना यह है कि इसने देश में समष्टि आर्थिक (macro economic) असंतुलन को पैदा किया। इस काल में वित्तीय घाटा (fiscal deficit) बहुत बढ़ गया जिससे भुगतान संतुलन पर भारी दबाव पैदा हुआ और देश में मुद्रा स्फीति को बढ़ावा मिला। 1980 के दशक की संवृद्धि प्रक्रिया की दूसरी मुख्य आलोचना यह हुई कि इसके कारण देश में साधनों के उपयोग में कार्यकुशलता का स्तर नीचे आया।

यही कारण है कि जब देश के सामने 1990-91 में आर्थिक संकट उत्पन्न हुआ तो सबसे पहले **समष्टि आर्थिक स्थिरीकरण** पर जोर दिया गया। सरकार ने इसी समय आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया शुरू की। नव उदारवादी अर्थशास्त्रियों के अनुसार, इसकी वजह से आठवीं पंचवर्षीय योजना के वर्षों में आर्थिक संवृद्धि की दर में तेजी आई। इस योजना काल में सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि की वार्षिक दर 6.7 प्रतिशत रही जबकि लक्ष्य 5.6 प्रतिशत था। यह निश्चय ही उत्साहवर्द्धक स्थिति थी। आठवीं योजना के दौरान संवृद्धि की प्रक्रिया संतोषजनक होने के बावजूद इस बात को स्वीकार करना होगा कि इस योजना के अंतर्गत जहां औद्योगिक

उत्पादन में 7.2 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि हुई, वहां आधारभूत ढांचागत क्षेत्रों में उत्पादन क्षमता का संतोषजनक विस्तार नहीं हुआ। बिजली, गैस, रेल यातायात तथा अन्य परिवहन क्षेत्रों में अपेक्षित निवेश न होने से आधारभूत ढांचे का उतना विकास नहीं हुआ जिसके आधार पर नौवीं पंचवर्षीय योजना में आर्थिक संवृद्धि की प्रक्रिया को तेज रख पाना संभव होता।

नौवीं पंचवर्षीय योजना में आठवीं पंचवर्षीय योजना की उपलब्धि और उदारीकरण से अपेक्षाओं को ध्यान में रखकर सकल घरेलू उत्पाद की संवृद्धि दर का लक्ष्य 6.5 प्रतिशत वार्षिक निर्धारित किया गया परन्तु उपलब्धि 5.3 प्रतिशत वार्षिक ही रही। योजना आयोग के अनुसार इस असंतोषजनक निष्पादन के तीन प्रमुख कारण थे—(1) पांच में से तीन वर्षों में कृषि का निराशाजनक निष्पादन, (2) औद्योगिक वस्तुओं की मांग में कमी जिसके परिणामस्वरूप औद्योगिक संवृद्धि की दर कम रही, तथा (3) विश्व अर्थव्यवस्था में शिथिलता (slowdown) जिसका भारतीय निर्यातों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।[1] दसवीं पंचवर्षीय योजना में संवृद्धि का लक्ष्य 8.0 प्रतिशत प्रति वर्ष रखा गया जबकि उपलब्धि 7.8 प्रतिशत प्रति वर्ष रही। यदि हम योजना का पहला वर्ष (2002-03) छोड़ दें तो बाकी के चार वर्षों में आर्थिक संवृद्धि दर 8.7 प्रतिशत प्रति वर्ष प्राप्त होती है। यह चीन के बाद विश्व भर में दूसरी सबसे अधिक विकास दर थी। इससे सरकारी क्षेत्रों में काफी उत्साह पैदा हुआ तथा सरकार ने यह दावा किया कि 'अर्थव्यवस्था प्रभावी तौर पर उच्च संवृद्धि चरण में पहुँच गई है।'[2] इससे प्रोत्साहित होकर सरकार ने ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में 9 प्रतिशत प्रति वर्ष का संवृद्धि लक्ष्य निर्धारित किया। योजना के प्रथम वर्ष 2007-08 में संवृद्धि दर 9.2 प्रतिशत रही परन्तु दूसरे वर्ष 2008-09 में विश्वव्यापी मंदी के परिणामस्वरूप आई आर्थिक शिथिलता के कारण संवृद्धि दर गिरकर 6.7 प्रतिशत रह गई। 2009-10 में आर्थिक संवृद्धि दर 7.4 प्रतिशत रही।

आत्मनिर्भरता
(Self Reliance)

1951 में आर्थिक आयोजन की प्रक्रिया शुरू होने के समय भारत तीन दृष्टियों से दूसरे देशों पर निर्भर था। एक तो कृषि प्रधान देश होते हुए भी इसे खाद्यान्नों का आयात करना होता था। दूसरे, इस देश में आधारभूत उद्योगों का विकास लगभग न के बराबर होने की वजह से बड़ी मात्रा में परिवहन उपकरण, बिजली सम्बन्धी संयंत्र, मशीनी औजार, भारी इंजीनियरिंग वस्तुएं और दूसरे पूँजीगत पदार्थ विकसित देशों से आयात करने होते थे। तीसरे, देश में बचत स्तर नीचा होने के कारण निवेश के लिए काफी विदेशी सहायता लेना जरूरी था। जब कोई देश विशुद्ध व्यापारिक शर्तों पर आयात अथवा निर्यात करता है तो वह उसके हित में होता है। लेकिन अल्पविकसित देशों की स्थिति इस दृष्टि से भिन्न है। विकसित देश इन देशों को खाद्यान्न, मशीनें तथा पूँजीगत उपकरण बेचते समय अपनी मजबूत सौदाकारी (bargaining) शक्ति का प्रयोग करते हैं और प्रायः अनुचित रूप से ऊंची कीमतें वसूल करते हैं। वे इन चीजों के निर्यात को राजनीतिक दबाव के लिए भी इस्तेमाल करते हैं। **कोई भी देश यदि अपनी संवृद्धि प्रक्रिया को दूसरे देशों के प्रभाव से मुक्त रखना चाहता है तो उसे न केवल खाद्यान्नों और मशीनों तथा दूसरे उपकरणों की दृष्टि से आत्मनिर्भर बनना होगा, बल्कि विदेशी सहायता पर निर्भरता को भी कम करना होगा।**

मुख्य रूप से यही वे कारण थे जिनकी वजह से आत्मनिर्भरता को आर्थिक आयोजन का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य माना गया था। पहली और दूसरी पंचवर्षीय योजनाओं में आत्मनिर्भरता पर स्पष्ट रूप से जोर नहीं दिया गया था। पहली बार तीसरी पंचवर्षीय योजना में यह स्पष्ट रूप से कहा गया कि देश निश्चित समय-अवधि में आत्मनिर्भरता का उद्देश्य प्राप्त करने की कोशिश करेगा। लेकिन इस योजना में आत्मनिर्भरता की परिभाषा संकुचित अर्थ में की गई। आत्मनिर्भरता को योजना आयोग ने विदेशी सहायता से मुक्ति के रूप में परिभाषित किया।

चौथी पंचवर्षीय योजना में आत्मनिर्भरता के लक्ष्य को ज्यादा ठोस रूप देने के साथ इसे प्राप्त करने का समय अधिक निश्चित रूप से तय किया गया। योजना के दस्तावेज में कहा गया कि विदेशी सहायता को कम किया जाएगा, निवल ऋण सेवा प्रभार (net debt servicing) जिसमें ब्याज का भुगतान शामिल है चौथी योजना खत्म होने के समय आधा रह जाएगा और उसके बाद कम से कम समय में उसे पूरी तरह समाप्त किया जा सकेगा। इसके अलावा दीर्घकालीन परिप्रेक्ष्य (long term perspective) में यह भी स्पष्ट किया गया कि 1980-81 तक देश को दृश्य (visible) और अदृश्य (invisible) निर्यातों और निजी पूंजी सौदों से विदेशी

1. Government of India, Planning Commission, *Tenth Five Year Plan 2002-07* (Delhi, 2003), Volume I, p. 24.
2. Government of India, *Economic Survey* 2007-08 (Delhi, 2008), p. 1.

विनिमय की इतनी प्राप्ति होगी कि आयात की जरूरतों और विदेशी ऋणों पर ब्याज के दायित्वों के भुगतान के लिए काफी हो। इस तरह योजना आयोग ने विश्वास प्रकट किया था कि ऋणों की अदायगी को छोड़कर अन्य किसी बात के लिए रियायती शर्तों पर ऋणों की जरूरत नहीं पड़ेगी। चौथी योजना के शुरू के चार वर्षों में इस दिशा में आशा के अनुकूल प्रगति हुई लेकिन योजना के आखिरी वर्ष के दो ऐसी बातें हुईं कि भुगतान सन्तुलन की स्थिति फिर गम्भीर हो गई। 1972-73 में देश में सूखा पड़ा और इसकी वजह से बड़ी मात्रा में खाद्यान्नों का आयात करना पड़ा। दूसरी बात यह हुई कि भारत द्वारा आयात की जाने वाली बहुत सारी वस्तुओं की अन्तर्राष्ट्रीय कीमतें तेजी के साथ बढ़ीं। इनमें पैट्रोलियम पदार्थ, इस्पात, अलौह धातुएं, उर्वरक और अखबारी कागज बहुत महत्वपूर्ण थीं। भारी ऋण-सेवा प्रभार (debt servicing charges) के साथ-साथ इस बढ़े हुए आयात बिल ने भुगतान सन्तुलन की स्थिति बहुत गंभीर बना दी। अतः पांचवीं पंचवर्षीय योजना में भुगतान सन्तुलन की स्थिति सुधारने के लिए निर्यात संवर्धन (export promotion) और आयात नियन्त्रण की दृष्टि से अनेक उपाय किये गए। योजना आयोग ने विश्वास प्रकट किया था कि इन उपायों से 1985-86 तक अर्थव्यवस्था लगभग आत्मनिर्भर हो जायेगी।

आत्मनिर्भरता को प्रावैगिक अर्थ देना (Dynamic meaning assigned to self-reliance)–योजना आयोग ने आत्मनिर्भरता को प्रावैगिक (dynamic) अर्थ प्रदान किया है। कोई भी देश यदि आर्थिक संवृद्धि के उद्देश्य को छोड़ने के लिए तैयार है तो उसे आत्मनिर्भर होने में कोई कठिनाई नहीं होगी। भारत में आर्थिक आयोजन का उद्देश्य तेजी के साथ विकास के साथ-साथ आत्मनिर्भरता के उद्देश्य को प्राप्त करना रहा है और यही कारण है कि इसे हासिल करना उतना आसान नहीं लगता। पाँचवीं योजना की अवधि में भुगतान सन्तुलन की स्थिति में काफी सुधार हुआ लेकिन उन उपायों की वजह से नहीं जिनकी व्यवस्था योजना में की गई थी। इस अवधि में मध्य पूर्व तथा अफ्रीका के बहुत सारे देशों में भारतीय श्रम की मांग बढ़ी और बड़ी संख्या में भारतीय वहां गए। उनके निजी प्रेषणों (private remittances) में भारी वृद्धि हुई। नतीजा यह हुआ कि जहां 1973-74 में भारत के कुल विदेशी विनिमय भंडार 736 मिलियन डालर के थे, वहां 1979-80 में 6,324 मिलियन डालर के हो गये।

1990-91 में सरकार द्वारा भुगतान सम्बन्धी स्थिति की उचित व्यवस्था कर सकने की क्षमता में संदेह उत्पन्न हो गया। इसलिए अल्पकालीन विदेशी ऋण मिलने कठिन हो गए। इसके फलस्वरूप विदेशी विनिमय भंडार 1990-91 में मात्र 2,236 मिलियन डालर रह गए। जुलाई 1991 में बिगड़ी हुई स्थिति को संभालने के लिए सरकार ने रुपये का अवमूल्यन किया। इसके अलावा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक से ऋणों की व्यवस्था की गई। सरकार का दावा है कि सुधार अवधि में स्थिति में सुधार हुआ है। इसका प्रमाण यह बताया जाता है कि मार्च 2008 के अन्त तक विदेशी विनिमय भंडार 309.7 बिलियन डालर तक पहुँच चुके थे।

आत्मनिर्भरता के क्षेत्र में उपलब्धियां (Achievements in the field of self-reliance)–**आर्थिक आयोजन के काल में आत्मनिर्भरता की दिशा में भारत की दो महत्त्वपूर्ण उपलब्धियां हैं। एक तो भारत खाद्यान्नों की दृष्टि से लगभग आत्मनिर्भर हो गया है। दूसरे, देश में भारी इन्जीनियरिंग, मशीनी औजारों, लोहा-इस्पात तथा दूसरे पूंजीगत उद्योगों के भारी विकास से मशीन, संयंत्र और अन्य पूँजीगत उपकरणों के बारे में देश बहुत कुछ आत्मनिर्भर हो गया है।** इस समय भारत के निर्यातों में इन्जीनियरिंग वस्तुओं का प्रथम स्थान है। तात्पर्य यह है कि भारत का पूँजी आधार अब काफी मजबूत है। वह बड़े से बड़े उद्योगों की स्थापना अपने मशीनी और तकनीकी ज्ञान के आधार पर कर सकता है। यह आर्थिक आयोजन की एक बड़ी उपलब्धि है।